इंटरनेशनल कम्युनिस्ट करन्ट

अफगानिस्तान में जंग

साम्राज्यवादी जंग का एक ही जवाब : अन्तर्राष्ट्रीय वर्ग संघर्ष!

6000 नागरिकों को मौत के घाट उतारते 11 सितंबर के धिनोने अपराध के जवाब में अमेरिका तथा उसके "मित्र" नए तथा और भी घिनोने कहर बरसा रहे हैं।

पहले ही बरबाद अफगानिस्तान पर हमलों से पूर्व ही लाखों अफगान शरणर्थी भूख तथा बिमारी से मौत का शिकार हो रहे थे। सैनिक हमलों के आरंभ से मृतकों की सूची अब और लंबी हो जाएगी। बम्ब तथा मिसाइलें भूखों को खाने की सप्लाई भंग कर देंगी। यह तथ्य अमेरिकी हवाई जहाजों द्वारा खाना फेंकेने के पब्लिसिटी स्टंट से नहीं बदल जाएगा। जहां तक "अचूक वार" की बात है, हम पहले ही यह 1991 में इराक में तथा 1999 में सर्बिया में देख चुके हैं। इन दोनों देशों की आबादियां आज भी इस "मानवीय" बम्बमारी के परिणाम भुगत रही हैं।

हमें बतया जा रहा है कि यह जंग बिन लादेन के इस्लामी कट्टरतावादी नेटवर्क से जनवाद तथा सभ्यता की रक्षा के लिए लडी जा रही है। पर जानवूझ कर अधिकतम नागरिकों का संहार करने में बिन लादेन तथा उसकी नसल तथाकथित 'सभ्य' राज्यों के कदमों पर ही चल रहे हैं। समूची धरती पर, 'पश्चिम' तथा 'मुसलिम जगत' पर, हावी व्यवस्था पूँजीवादी व्यवस्था है। यह वह व्यवस्था है जो पहले महायुद्व के समय से गहन पतन की अवस्था में है। अपने पतन के दौर में इसने पहले ही हमें नाजीवाद तथा स्तालिनवाद के मौत-शिवरों के साथ साथ दिये हैं लंदन के, ड्रेसडेन तथा हैम्बर्ग के, हिरोशिमा तथा नागासाकी के, वियतनाम तथा कंबोदिया के नरसंहार। इनमें से बहुधा नरसंहार भी जनवाद तथा सभ्यता के नाम पर ही किये गए। पिछले दशक में इसने हमें दिये हैं इराक तथा कुवैत में, बोसनिया, सर्बिया तथा कोसवो में अल्जीरिया, रवाण्डा, कांगो, चेचनिया तथा अन्यत्र नरसंहार। इनमें से हर खौफ-कथा में नागरिक आबदियों को ही बन्दी बनाया गया, उसे यातनाएँ दी गईं, बम्बों का शिकार बनाया गया तथा यातनाशिवरों में हांका गया। हमें इसी सभ्यता के बचाव के लिए कहा जा रहा है। एक सभ्यता जो अब अन्तहीन जंगों में जीवित है, जो अपने बढते हुए सडन में धंसती जा रही है तथा मानवजाति के अस्तित्व तक के लिए खतरा बन गई है।

जंग का असली ऐजण्डा

'आतंकवाद के खिलाफ जंग' एक सफेद झूठ है। न सिरफ इसलिए कि सवयं जनवादी महाशक्तियां आतंकवादी तरीके इस्तेमाल करती हैं (मस्लन अमेरिका आईआरए, कोंट्रा, अल्जीरियन इस्लामिक कट्टरतावादियों तथा सवयं बिन लादेन का, जिसने अफगानिस्तान में रुस के खिलाफ सीआईए ऐजण्ट के रुप में अपना कैरियर आरंभ किया, समर्थन करता रहा है)। बल्कि इसलिए भी कि मौजूदा सैनिक अभियान का असल मकसद 'आतंकवाद से लडना' नहीं। 1989 में पूर्वी गुट के पतन का फल था पश्चिमी गुट का बिखरना। नतीजन् अमेरिका ऐसी स्थिति के रुबरु है जहां ना सिरफ उसकी भूतपूर्व मित्र पश्चिमी ताकतें बल्कि छोटी ताकतें भी उसके नेतृत्व को चुनौती देने तथा अपनी अपनी साम्राज्यवादी लालसाओं की पर्ति में रत्त हैं। इसीलिए अमेरकि को पिछले दस साल में तीन बार अपनी सैनिक ताकत का महाप्रदर्शन करना पडा : इराक के खिलाफ, सर्बिया के खिलाफ और अब अफगानिस्तान के खिलाफ। इनमें से प्रत्येक अवसर पर ब्रिटेन, फ्रांस तथा जर्मनी जैसे अमेरिका के दोस्तों के पास मात्र एक ही विकल्प था - या तो अमेरिकी अगुआई तले गठजोड में शामिल हो जाएँ अथवा विश्व साम्राज्यवादी शतरंज में बेमानी हो जाएँ।

पर अमेरिका जितना ही अपनी अथारटी थोपने की कोशिश करता है, वह उतने ही अधिक तनाव तथा विवाद भडकाता है। 11 सितंबर से पूर्व अमेरिका कोयोटो संधि, मिसाइल प्रतिरक्षा तथा 'यूरो सेना' के सवाल पर यूरोप के अपने भूतपूर्व मित्रों के बढते विरोध का सामना कर रहा था। अब अपने 'मित्रों' को लाईन में लाने के लिए और अफगानिस्तान के गिर्द मध्य पूर्व से लेकर भारतीय उपमहाद्वीप तक के समूचे क्षेत्र में रणनीतिक उपलब्धियां हासिल करने के लिए वह 'आतंकवाद के खिलाफ जंग' को एक छडी के रुप में इस्तेमाल कर रहा है।

फिलहाल 'आतंकवाद के खिलाफ गठजोड' अमेरिका तथा अन्य ताकतों में फूट पर परदा डालने में सफल रहा है। पर विभाजन पहले ही सामने आ रहे हैं और आगे आगे और खुलकर सामने आएँगे। जंग का 'मुसलिम' जगत पर पहले ही गहन अस्थिरताकारक असर पड रहा है। वह नए द्वन्द्व पैदा कर रही है जिन्हे अमेरिका के प्रतिद्वन्द्वी इस्तेमाल करेंगे। एक 'सुरक्षित' दुनिया का निर्माण तो दूर, मौजूदा जंग सैनिक अराजकता की ओर रुझान तेज़ करेगी। इसमें निश्चित ही अन्य कातिलाना आतंकवादी कार्यवाहियां, जो आज अन्तर साम्राज्यवादी जंग का एक रुटीन तरीका बन गई हैं, भी शमिल रहेंगी।

पूँजीवादी जंग का मुख्य शिकार है मज़दूर वर्ग

11 सितंबर के नरसंहार के साथ हम विश्व साम्राज्यवादी फसादों की एक नई मंजिल में पहुँच गए हैं। एक मंजिल जिसमें जंगें 1945 के बाद के समूचे काल से अधिक स्थायी तथा व्यापक बन जाएँगी। और पूँजीवाद की तमाम जंगों की तरह, मज़दूर वरग तथा आबादी के सबसे गरीब हिस्से इसके मुख्य शिकार बनेंगे। टविन टावर्स में मरने वालों का बहुमत आफिस कर्मी, सफाई कर्मी, अग्निशामक, संक्षेप में मज़दूर थे। अफगानिस्तान में भी अधिकतम कीमत पूर्णतया साधनहीन, तालेबान सेनाओं में जबरन भर्ती अथवा सरकारी और अमेरिकी दोनों सेनाओं से जान बचा कर भागते लोगों को चुकानी पडेगी।

और मज़दूर वर्ग मात्र हाडमांस में जंग का शिकार नहीं। वह चेतना के सतर पर भी इसका शिकार है। अमेरिका में पूँजीपति वर्ग आतंकवादी हमले द्वारा पैदा उचित गुस्से का इस्तेमाल बदतरीन राष्ट्रवादी उन्माद भडकाने, 'राष्ट्रीय एकता' का आवाहन करने और शोषकों तथा शोषितों में एकजुटता स्थापित करने के लिए कर रहा है। एकबार फिर मृतकों के लिए हमदर्दी को जंगी अभियानों के समथर्न में तबदील करने की कोशिश की जा रही है। जहां मज़दूरों को आतंकवाद के खिलाफ सभ्यता का साथ देने के लिए नहीं कहा जा रहा, वहां उन्हें बिन लादेन को उत्पीडन के खिलाफ 'प्रतिरोध' का प्रतीक मानने तथा पवित्र युद्व के लिए तैयार होने के लिए कहा जा रहा है। जैसे अफगानिस्तान में, पाकिस्तान में, मध्यपूर्व में तथा केन्द्रीय देशों में मुस्लिम आबादियों को। घटनाओं के इस संस्करण मुताबिक, 11 सितंबर को 'अमेरिकनों ने वही पाया जिसके वे लायक थे'। 'अमेरिका विरोधी' यह विचारधारा जातियतावाद तथा शावनवाद का एक अन्य रुप है। मज़दूरों को अपनी असल पहचान, जो सब राष्ट्रीय सीमाओं को काटती है, जानने से रोकने का ही एक तरीका है।

समूची दुनिया में, आतंकवाद से लडने के नाम पर मज़दूर वर्ग को राजकीय आतंक का शिकार बनाया जा रहा है। न सिरफ राष्ट्रीयतावादी उन्माद के माहौल द्वारा थोपा, बल्कि समूची दुनिया में उठाए जा रहे दमन के ठोस कदमों द्वारा भी थोपा आतंक। आतंकवादी हमलों पैदा असल भय शासक वर्ग को पुलिस नियन्त्रण, पहचान जांच, फोन टेपिंग तथा अन्य 'सुरक्षा' उपायों की अपनी समूची व्यवस्था कड़ी करने का ठीक माहौल प्रदान करता है। एक व्यवस्था जिसे भविष्य में संदिग्ध आतंकवादियों के खिलाफ नहीं बल्कि पूँजीवाद के खिलाफ लड़ रहे मज़दूरों तथा क्रांतिकारियों के खिलाफ प्रयोग किया जाएगा। ब्रिटेन तथा अमेरिका में पहचान पत्रों का तथा भारत में आतंकवाद विरोधी कनून का मामला तो झांकी भर है।

जंग का जवाब है वर्ग संघर्ष न कि शान्तिवाद

शासक वर्ग जानता है कि अपने साम्राज्यवादी मंसूबों को एक नए स्तर पर लेजाने के लिए उसे समूची आबादी, पर सर्वोपरि मज़दूर वरग की वफादारी तथा समथर्न की जरुरत है। वह जानता है कि युद्व की राह में एकमात्र असल रुकावट है मज़दूर वर्ग जो अधिकतर सामाजिक दौलत पैदा करता है। और जो पूँजीवाद की जंगों में मरने वाला पहला होता है। ठीक इस लिए जरुरी है कि मज़दूर वर्ग **किसी** भी राष्ट्रीय हित संग **किसी** भी प्रकार की एकता को खारिज़ कर दे। युद्व की ओर कूच को रोकने के लिए जरुरी है कि वह **सवयं अपने वर्ग** हितों के लिए संघर्ष को सुलगाये तथा विकसित करे। छंटनियों के खिलाफ संघर्ष को तेज़ करे, जो न सिरफ मन्दी बल्कि आतंकवादी हमलों के फल स्वरुप भी थोपी जा रही हैं। बिमार राष्ट्रीय इकोनमी की सुदृडता के लिए अथवा युद्व प्रयासों में थोपे कार्यस्थल पर बलिदानों के खिलाफ संघर्ष। केवल यह संघर्ष ही मज़दूरों को पूँजीवादी संकट तथा विनाश के तमाम शिकारों संग अर्न्तराष्ट्रीय एकजुटता की जरुरत पहचानने के काबिल बना सकता है। केवल यह संघर्ष ही शोषण तथा जंग से रहित नए समाज का राह खोल सकता है।

सर्वहारा संघर्ष का 'शान्ति' ग्रुपों, ग्रीन पारटियों तथा वामपंथियों द्वारा 'युद्व को रोकने' के लिए स्थापित किये जा रहे भिन्न गठजोड़ों से कुछ भी साझा नहीं। शान्तिवादी यूएन को अथवा अर्न्तराष्ट्रीय कनून को अपील करते हैं; सर्वहारा संघर्ष कनून की रुकावटों को फांद कर ही फैल सकता है। पहले ही, बहुधा 'जनवादी' देशों में संघर्ष के तमाम प्रभावशाली रुप (जैसे हडतालें अन्य सेक्टरों को फैलाने के प्रयास, यूनियनी वोट की जगह आम सभाओं द्वारा फैसले लेना आदि), यूनियनों की मदद से गैरकानूनी बन गए है। जंग द्वारा शासित एक दौर में वर्ग संघर्ष का गैरकनूनी ठहराया जाना और भी स्पष्ट हो जाएगा।

शान्तिवादी 'सभी नेक विचार लोगों' को, बुश, ब्लेयर एण्ड कंपनी की पोजीशनों का विरोध करते सभी वर्गों के गठजोड़ को भी अपली करते हैं। ठीक ऐसे वक्त जब मज़दूर वर्ग के लिए नंबर एक मसला है अपनी विशिष्ट सामाजिक तथा राजनीतिक पहचान पुर्नप्राप्त करना, यह मज़दूर वर्ग को समूची आबादी में डुबो देने की राह है।

सर्वोपरि, शान्तिवाद ने राष्ट्रीय हितों का कभी विरोध नहीं किया, जिनकी रक्षा साम्राज्यवाद के युग में केवल साम्राज्यवाद के रास्ते ही हो सकती है। यह न केवल 'सम्मानजनक' शान्तिवादियों, बल्कि शान्तिवाद के 'रेडीकल' धडे, माओवादियों तथा त्रत्सकीवादियों पर भी लागू होता है, जो सदा मज़दूर वर्ग से इस या उस राष्ट्रवाद की रक्षा करवाने की कोशिश करते हैं। खाड़ी युद्व में उन्होंने इराक का पक्ष लिया। बाल्कान युद्व में उनमें सर्बिया अथवा कोसोवो मुक्ति सेना (और इस प्रकार नाटो) का पक्ष लेने पर बहस चलती रही। आज वे समर्थन के लिए एक 'साम्राज्यवाद विरोधी' गुट की खोज में भागदौड कर रहे हैं। गर बिन लादेन या तालेबान नहीं तो 'फिलस्तीनी प्रतिरोध' के सशत्र ग्रुप ही सही, जिनके विचार तथा तरीके ठीक उन्हीं जैसे हैं।

युद्व का विरोध करना तो दूर, शान्तिवाद बुर्जूआज़ी के सैनिक गठजोड का आवश्यक हिस्सा है। इस सामाज में युद्व संबंधी सच्ची वर्ग चेतना के विकास को रोकने तथा विपथ करने का एक तरीका है।

मानवजाति के सामने विकल्प युद्व अथवा शान्ति का नहीं। उसके समक्ष विकल्प है साम्राज्यवादी युद्व के उन्मत्त वृत के तथा वर्ग युद्व के बीच, बर्बरता में अधपतन तथा कम्युनिस्ट क्रांन्ति की विजय के बीच। 1914 में लेनिन तथा लुग्जमवर्ग द्वारा इस विकल्प की घोषणा की गई थी। और इसका जवाब उन हडतालों, बगावतों तथा क्रांतियों द्वारा दिया गया था जिन्होंने पहले विश्वयुद्व का अन्त किया। पूँजीवादी पतनशीलता तथा आत्मविनाश के करीब सौ साल बाद यह विकल्प आज हमारे समक्ष और भी तीव्र स्पष्टता से खडा है।

पूँजीवाद के खिलाफ, जो आज दुनिया में तमाम युद्वों, गरीबी, भुखमरी और समस्त बर्बरता के लिए जिम्मेवार है, सर्वहारा के सदैव के नारे आज पहले से भी अधिक प्रसांगिक हैं :

दुनिया के मज़दूरों, एक हो!

मज़दूर वरग की मुक्ति सवयं मज़दूरों का ही कार्य है!

इंटरनेशनल कम्युनिस्ट करन्ट, 8.10.01

यह परचा निम्न देशों में बांटा जा रहा है:

ब्रिटेन, अमेरिका, मेक्सीको, वेन्जुएला, फ्रांस, स्पेन, इटली, हालैण्ड, बेल्जियम, जर्मनी, स्विटजरलैण्ड,भारत, रुस, आस्ट्रेलिया